19/9/07

ऋग्वैदिक काल से उ० वैदिक काल तक (1500 ई० पू० से 600 ई०पू०) राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक क्षेत्रों में निरन्तरता तथा परिवर्तन के तत्वों को रेखांकित कीजिए?

राजनैतिक व्यवस्था:→

ऋग्वैदिक काल की राजनैतिक संरचना कबिलियाई ढांचे पर आधारित थी राज्य का क्षेत्रीय आधार बहुत स्पष्ट नहीं था उसी प्रकार राजा की स्थिति भी स्पष्ट नहीं थी राजा की पहचान आवश्यक रूप में अपने कबीले के साथ होती थी और इसके दो मुख्य कर्तव्य थे ① युद्ध में सेना का नेतृत्व करना ② अपने कबीले के लोगों की रक्षा करना। इस प्रकार राजपद युद्ध की आवश्यकताओं के अनुकूल था ऋग्वैदिक काल में सरकार का लोकप्रिय स्वरूप राजतंत्रात्मक था यद्यपि राजा के निर्वाचन का भी कुछ संकेत मिलते हैं लेकिन यह उतना स्पष्ट नहीं है जितना कि उ० वैदिक काल में। इस समय प्रशासनिक संगठन के विषय में भी कुछ आभास मिलता है लेकिन इस काल में करारोपण पद्धति स्थापित नहीं हुयी राजा को एक 'बलि' नामक कर मिलता था परन्तु यह एक महत्वपूर्ण कर न होकर महज एक स्वऐच्छिक कर था।

ऋग्वैदिक काल में अधिकारियों की स्थिति सीमित थी अधिकारियों के रूप में युवराज, सेनानी, पुरोहित आदि की चर्चा मिलती है ये अधिकारी रक्त सम्बन्धों से जुडे हुये थे अतः ऋग्वैदिक काल में स्थायी नौकरशाही तथा स्थायी सेना का विकास नहीं हो सका था इस काल में प्रशासन की सबसे छोटी इकाई 'कुल' थी, कुल के ऊपर ग्राम, ग्राम के ऊपर विश, विश के ऊपर जन था। ऋग्वैदिक काल में राजा की शक्ति पर अंकुश लगाने वाली 'सभा' एवं समिति जैसी जनतन्त्रीय संस्था विद्यमान थी समिति जैसी संस्था सामान्य राजनीतिक गतिविधियों से सम्बन्धित थी जबकि सभा जैसी संस्था का स्वरूप अराजनैतिक था तथा इसमें श्रेष्ठ जन ही भाग ले सकते थे लेकिन इसके बावजूद ऋग्वैदिक काल में राजनैतिक संस्थाओं का एक संतुलित विकास नहीं हो पाया।

"उत्तर वैदिक काल" में निरन्तरता:→

उ० वैदिक काल की राजनैतिक संरचना पर भी कुछ हद तक कबिलाई तत्वों का प्रभाव बना रहा यद्यपि राजा की स्थिति पहले की तुलना में अधिक स्पष्ट थी परन्तु राजपद पर कुछ निश्चित सीमायें बनी रहीं प्रथम उ० वैदिक ग्रन्थों में मन्त्री को राजनी राजकृतें तथा सुत और ग्रामणी को अराजनो राजकृतें कहा गया है। इसका अर्थ है राजा के सिंहासनारोहण में उनकी विशिष्ट भूमिका रही होगी उसी प्रकार उ० वैदिक राजनीति में ब्रह्म एवं क्षत्र के बीच स्पष्ट विभाजन था इनका तात्पर्य ब्राह्मण और क्षत्रिय से था अर्थात इस काल में ब्राह्मण भी राजपद पर कुछ निश्चित अंकुश लगाते थे। उ० वैदिक काल में भी रक्त सम्बन्धों से पृथक नौकरशाही

और स्थायी सेना का विकास नहीं हो सका चतुर्थ इस काल में सभा एवं समिति जैसी संस्थाओं में होना। थी तथा ये भी राजपद पर कुछ निश्चित अंकुश रखती होंगी साथ ही उ० वैदिक काल में भी प्रशासन की सबसे छोटी इकाई 'कुल' ही स्थापित रही।

परिवर्तन :→

उ० वैदिक काल में राज्य का क्षेत्रीय आधार स्पष्ट हो गया तथा क्षेत्र आधारित राज्य 'जनपद' कहा जाने लगा यह कई 'जनों' को मिलाकर बना था अत: राजा की स्थिति भी पहले की तुलना में अधिक मजबूत हुयी उसके क्षेत्र में आर्य समूह के साथ साथ और आर्य समूह भी शामिल होने लगे इसके परिणाम स्वरूप रक्त सम्बन्ध कमजोर पड़ने लगे अब राजा सर्वजनित, सर्वभूमिपति और एकराट जैसी उपाधि धारण करने लगे 'एतरेय ब्राह्मण' नामक ग्रन्थ से स्पष्ट होता है कि अलग अलग क्षेत्रों के शासक अलग अलग उपाधियां धारण करते थे अर्थात सर्वप्रथम 'एतरेय ब्राह्मण' में राजत्व की अवधारणा स्पष्ट रूप में उभर कर आयी उ० वैदिक काल तक राजपद के साथ कई यज्ञ भी सम्बद्ध कर दिये गये थे यथा वाजपेय यज्ञ, अश्वमेध यज्ञ आदि यज्ञ होने लगे इसके परिणाम-स्वरूप राजपद की शक्ति तथा प्रतिष्ठा बढ़ने लगी तथा इस पद का आंशिक दैवीकरण भी हुआ।

उ० वैदिक काल में तुलनात्मक रूप में करारोपण प्रणाली भी स्थापित हो गयी 'बलि' नामक कर अब स्वैच्छा से अनिवार्य बन गया बलि के अतिरिक्त हम 'शुल्क' और 'भाग' जैसे करों की चर्चा पाते हैं तथा करारोपण प्रणाली के विकास के परिणामस्वरूप अधिकारियों की संख्या में वृद्धि देखी जा सकती है इन अधिकारियों के रूप में हम 12 रत्नीयों का उल्लेख पाते हैं अर्थात उ० वैदिक काल में प्रशासन की सर्वोच्च इकाई के रूप में राजपद स्थापित हो गया इस प्रकार उ० वैदिक काल में राज्य का राजनीतिक स्वरूप पहले की तुलना में अधिक स्पष्ट हुआ।

ऋग्वैदिक अर्थव्यवस्था.

ऋग्वैदिक अर्थव्यवस्था जनजातीय संरचना पर आधारित थी अर्थव्यवस्था का आधार पशुपालन एवं कृषि था परन्तु ऋग्वैदिक काल में संभवत: कृषि की भूमिका कम महत्वपूर्ण थी परन्तु इनका मुख्य पेशा पशुपालन था इस दौरान फसल के रूप में हमें ऋग्वेद में हमें 'यव' तथा धान्य का उल्लेख मिलता है जिसकी पहचान संभवत: जौ के रूप में हुयी है ऋग्वैदिक आर्यों को ऋतुओं का ज्ञान था कृषि जुताई में लकड़ी के हल का प्रयोग करते थे जिसे लांगल कहा जाता था वे कृषि में कृत्रिम सिंचाई तथा खाद का उपयोग करते थे जिसे करीष कहा जाता था।

ऋग्वैदिक अर्थव्यवस्था में निश्चय ही पशुपालन को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था क्योंकि जीवन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण गतिविधियां 'गौ' के माध्यम से व्यक्त हुयी यथा युद्ध के लिये 'गवेष्टि' शब्द का प्रयोग

तथा समय की माप के लिये 'अंगुलि' शब्द का प्रयोग, दूरी की माप के लिये 'गव्यूत' शब्द का प्रयोग, धनी व्यक्ति को 'गोमत' तथा पुत्री को 'दुहिता' शब्द का प्रयोग करते थे ऋग्वेद में कुछ शिल्पों का उल्लेख भी मिलता है यथा कुंभकारी, धातु निर्माण, बुनाईकार आदि, ऋग्वेद में धातु के लिये अयस शब्द का प्रयोग होता था जिसकी पहचान ताँबे तथा काँसे हुयी थी इस काल में व्यापार वाणिज्य का भी विवरण मिलता है क्योंकि ऋग्वेद में वणिक समुदाय का उल्लेख हुआ है व्यापारियों के सम्बन्ध में 'पणि' नामक समुदाय का उल्लेख मिलता है ये गैर आर्यो से सम्बन्धित थे तथा अपनी कंजूसी के लिये विख्यात थे।

पणि लोग वैदिक आर्यों के साथ कुछ वस्तुओं का आदान प्रदान करते थे ये गणना से भी परिचित थे ऋग्वेद में अष्टकर्णी शब्द का प्रयोग हुआ है परन्तु इस काल में नियमित सिक्कों का विकास नहीं हुआ था तथा वस्तु विनिमय प्रणाली प्रचलित थी सिक्कों के रूप में 'निष्क' तथा 'शतमान' का उल्लेख मिलता है निष्क आभूषणों को तो 'शतमान' गायों को परन्तु ये नियमित सिक्के नहीं थे ऋग्वैदिक काल में 'पुर' की चर्चा तो मिलती है परन्तु 'नगर' की नहीं अर्थात ऋग्वैदिक अर्थव्यवस्था नगर को आधार नहीं दे सकी तथा इसका स्वरूप ग्रामीण ही बना रहा।

उत्तर वैदिक कालीन, निरन्तरता :- उ० वैदिक अर्थव्यवस्था में भी पशुपालन को विशेष महत्व प्राप्त था अथर्ववेद में विभिन्न प्रकार के पशुओं का विवरण दिया गया है जिनका आर्थिक महत्व रहा होगा इस काल में भी कृषि में लकड़ी के हलों का ही प्रयोग होता रहा यद्यपि इस काल में लोहे का प्रचलन आरम्भ हो गया था परन्तु आरम्भिक लौह उपकरण युद्ध सामग्रियों से सम्बद्ध रहे उ० वैदिक काल में धातु के रूप में सोना, ताँबा और काँसे का प्रयोग होता रहा यद्यपि इस काल में तुलनात्मक रूप में व्यापार वाणिज्य से सम्बन्धित गतिविधियों में वृद्धि हुयी परन्तु इस दौरान भी अर्थव्यवस्था में वाणिज्य व्यापार की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण नहीं हो सकी और वस्तु विनिमय प्रणाली का प्रचलन बना रहा यद्यपि कुछ सिक्कों का प्रचलन बना रहा पर वे नियमित सिक्के नहीं थे इसी तरह उ० वैदिक अर्थव्यवस्था भी ग्रामीण अर्थव्यवस्था बनी रही यद्यपि हस्तिनापुर और कौशाम्बी जैसे स्थलों की पहचान नगर के रूप में हुयी परन्तु वे भी आद्य नगर से अधिक कुछ नहीं थे।

परिवर्तन :-> उ० वैदिक अर्थव्यवस्था, ऋग्वैदिक अर्थव्यवस्था एवं बुद्ध युग के बीच के संक्रमण काल को रेखांकित करती है इस काल की अर्थव्यवस्था निर्वाह अर्थव्यवस्था से ऊपर उठने लगी अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्व बढ़ने लगा कृषि के बढ़ते हुये महत्व को शतपथ ब्राह्मण में रेखांकित किया गया है जब ऐसा कहा गया कि राजा जनक ने स्वयं अपने हाथों से हल पकड़ा था इसका प्रतीकात्मक अर्थ था उ० वैदिक काल में उच्च वर्ग के लोग

भी कृषि गतिविधियों में संलग्न होने लगे उ० वैदिक काल में अनाजो के भी साक्ष्य मिलते है इसमें यव के अतिरिक्त गोधूम एवं व्रीहि का भी चित्रण मिलता है काठक संहिता में 24 बैलो द्वारा खींचे जाने वाले हल का उल्लेख मिलता है यद्यपि उस काल में इतनी बडी संख्या में पशुओ की बलि दी जाती थी अत: यह अनुमान करना कठिन है कि कितनी बडी संख्या में पशुधन कृषि गतिविधियो के लिये उपलब्ध रहा होगा परन्तु इतना तो अनुमान लगाया जा सकता है कि उ० वैदिक काल में अपेक्षाकृत गहरी स्तर तक जुताई की जाती थी।

इस काल में कृषि क्षेत्र में उत्पन्न अधिशेष ने शिल्पो के विकास का मार्ग प्रशस्त किया वाजसनेय संहिता में विभिन्न प्रकार की शिल्पीयो का उल्लेख मिलता है उ० वैदिक काल में धातु के रूप में चाँदी एवं लोहे का प्रचलन भी प्रारम्भ हुआ इस काल में तुलनात्मक रूप में वाणिज्य व्यापार का भी विकास हुआ वस्तुत: कृषि एवं शिल्प के क्षेत्र में विकास ने वाणिज्य व्यापार के विकास को प्रोत्साहन दिया उ० वैदिक काल में वैदिक आर्य समुद्र से भी परिचित थे शतपथ ब्राह्मण में जल प्रलय का उल्लेख हुआ है इस काल में सिक्को के रूप में निष्क, सतमान और कृष्णल की चर्चा पाते है यद्यपि यह नियमित सिक्के नही है उसी प्रकार तैत्तरीय, आरण्यक ग्रन्थ में नगर शब्द का उल्लेख हुआ है फिर भी यह मानना कठिन है कि उ० वैदिक कालीन अर्थव्यवस्था नगरीकरण का आधार निर्मित कर सकी क्योंकि वास्तविक रूप में नगरो का विकास परवर्ती काल में ही सम्भव हुआ।

ऋग्वैदिक कालीन समाज

ऋग्वैदिक समाज रक्त सम्बन्ध पर आधारित था तथा इस पर कबिलाई तत्वो का प्रभाव देखा जा सकता है यद्यपि ऋग्वैदिक काल में वर्ण विभाजन की प्रक्रिया आरम्भ हो गयी थी परन्तु सामाजिक गतिशीलता पूरी तरह बाधित नही हुयी थी ऋग्वैदिक काल में चार वर्णो की सूचना मिलती है – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र। शूद्र शब्द की चर्चा सर्वप्रथम ऋग्वेद के 10वें मण्डल के पुरुष सूक्त में मिलती है 10वे मण्डल को क्षेपक माना जाता है अर्थात् यह परवर्ती काल में जोडा गया है यही वजह है कि चतुर्वर्ण व्यवस्था की वास्तविक शुरुआत उ० वैदिक काल से ही मानी जाती है ऋग्वैदिक काल में वर्ण का आधार जन्म न होकर कर्म था कर्म में परिवर्तन के साथ वर्ण मे भी परिवर्तन हो जाता था तथा वर्ण विभाजन पेशे से सम्बद्ध था यथा विश्वामित्र जन्म से राजन थे परन्तु वे कर्म से पुरोहित बन गये उसी प्रकार ऋषि भृगु के विषय में कहा जाता है कि उनके वंशजो ने अनेक राज्यों की स्थापना की थी इसका प्रतीकात्मक अर्थ है कि भृगु के वंशजो ने क्षत्रियो के पेशे को अपना लिया ऋग्वेद में एक स्थान पर एक बालक कहता है कि "मैं कवि हूँ, मेरे पिता चिकित्सक और मेरी माता अनाज पीसती है - - - -" अर्थात इस काल में एक ही परिवार के लोग विभिन्न वर्णो में कार्य करते थे इस प्रकार हम देखते है कि इस काल में समाज मे पर्याप्त गतिशीलता थी। ऋग्वैदिक समाज पितृसत्तात्मक था परिवार के मुखिया का विशिष्ट स्थान था उन्हे परिवार के ऊपर असीमित

अधिकार प्राप्त था परन्तु सामान्यत: मुखिया कृपाशील और क्षमाशील होते थे
ऋग्वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति अपेक्षाकृत बेहतर थी बाल विवाह का प्रचलन नही था सामान्यत: 16, 17 वर्ष में विवाह होता था नियोग प्रथा अथवा विधवा विवाह का प्रचलन था लड़कियों को भी शिक्षा पाने का अधिकार था इस काल में ऐसी विदुषी महिलायें हुयी जिन्होने वैदिक स्रोतो के लेखन मे योगदान दिया स्त्रीयों को पति के साथ यज्ञो में भाग लेने तथा राजनीतिक संस्थाओ मे प्रवेश लेने का अधिकार था तथा महिलाओं में उपनयन संस्कार भी होता था ऋग्वैदिक काल में यद्यपि वीर पुत्रो की कामना की जाती थी परन्तु पुत्रियों के जन्म को हतोत्साहित नही किया जाता था इस काल मे पुरुषो मे बहु विवाह का प्रचलन था परन्तु बहुपति पत्निवाद प्रचलन में नही था लेकिन इसके जो भी उदाहरण मिलते है उसे पूर्वकाल का अवशेष माना जाता है इस काल में दास व्यवस्था का प्रचलन था युद्धबन्दियों को दास रूप मे लगा दिया जाता था ऋणी व्यक्ति भी ऋण ना चुका पाने की स्थिति में ऋणदाता के दास बन जाते थे फिर भी कुल मिलाकर ऋग्वैदिक समाज एक समतामूलक समाज था जो प्राचीन से आधुनिक काल तक एक आदर्श समाज के रूप में स्थान मिला है।

उत्तर वैदिक कालीन निरन्तरता :
उ० वैदिक समाज अभी तक कबिलाई बना रहा और इसका आधार भी रक्त सम्बन्ध ही रहा यद्यपि उ० वैदिक काल मे चतुर्वर्ण व्यवस्था स्पष्ट रूप से आरम्भ हुयी परन्तु सामाजिक गतिशीलता पूरी तरह बाधित नही हुयी और ना ही शूद्रो की स्थिति में अधिक गिरावट आयी जैसे कि हमे परवर्ती काल में देखने को मिलती है इस काल में भी परिवार की विशेष स्थिति सुरक्षित रही और उन्हे अन्य सदस्यों के नियमन का अधिकार रहा यद्यपि इस काल में महिलाओ स्थिति में तुलनात्मक रूप से गिरावट आयी फिर भी परकाल की तुलना में महिलाओ की स्थिति बेहतर थी उन्हे शिक्षा प्राप्ति का अधिकार था तथा इस काल में भी हमे बाल विवाह जैसी कुरीतियां स्पष्टत: दिखायी नही पडती है ऋग्वेद काल की तरह इस काल मे भी दास व्यवस्था का प्रचलन रहा परन्तु दासो को घरेलू कार्यों मे ही लगाया गया था कृषि में नही।

परिवर्तन :
उ० वैदिक काल में चतुर्वर्ण व्यवस्था पूरी तरह स्थापित हो गयी और वर्ण व्यवस्था को व्यापक प्रोत्साहन मिला अर्थात इस काल मे ऋग्वेद काल की सामाजिक गतिशीलता बाधित होने लगी इस काल में सर्वश्रेष्ठ स्थान ब्राह्मणो का रहा ब्राह्मणों ने यज्ञ पद्धति के माध्यम से अपने को स्थापित किया ब्राह्मणो के बाद क्षत्रियो ने इस काल में युद्ध अस्त्रों के रूप में लोहे के उपकरणों को प्रोत्साहन मिला जिससे क्षत्रियो को प्रोत्साहन मिला तीसरा वर्ण वैश्य था जो एक मात्र कर दाता समूह था इन तीनो को द्विज का स्तर प्राप्त हुआ चौथा इससे पृथक शूद्र वर्ग था इससे शूद्रो की सामाजिक स्थिति क्षीण थी और इनका दायित्व था द्विजो की सेवा करना फिर भी शूद्रो को अछूतो की स्थिति प्राप्त नही थी इन्हे राज्याभिषेक में भाग लेने का अधिकार प्राप्त था।

उ० वैदिक काल में स्त्रियों की दशा में परिवर्तन आया उनके अधिकार कुछ सीमित हुये एतरेय ब्राह्मण में पुत्री को परिवार का शोक एवं पुत्री को दुखों का कारण कहा गया है मैत्रायणी संहिता में स्त्रियों की तुलना मदिरा एवं पासा जैसी सामाजिक बुराइयों से की गयी है बृहदारण्यक उपनिषद में वर्णित याज्ञवल्क्य, गार्गी संवाद में स्त्रियों की हीन दशा की ओर संकेत किया गया है इस काल में सभा जैसी संस्था में भी स्त्रियों का प्रवेश वर्जित हो गया था।

उ० वैदिक काल की सामाजिक व्यवस्था की एक महत्वपूर्ण विशेषता है गोत्र की अवधारणा का विकास गोत्र शब्द 'गोष्ठ' शब्द से निकला है गोष्ठ उस स्थान विशेष को दर्शाता है जहां सबकी गायें सामूहिक रूप से बाँधी जाती थी आरम्भ में वैसे तो लोग जिनकी गाय एक साथ बांधी जाती थी एक गोष्ठ के माने जाने लगे और फिर इसी गोष्ठ से गोत्र शब्द का विकास हुआ आगे ये गोत्र शब्द ब्राह्मणों के लिये थे लेकिन ब्राह्मणों द्वारा ही बाद के काल में इन्हे यजमानों को दिये गये।

उ० वैदिक आर्यों ने आश्रम व्यवस्था की अवधारणा भी विकसित की प्रारम्भ में हमें तीन आश्रमों का ही उल्लेख मिलता है लेकिन कुछ समय पश्चात ही हमें चौथा आश्रम संयास का उल्लेख मिलता है इस आश्रम व्यवस्था का घोषित उद्देश्य था पुरुषार्थों को प्राप्त करना तथा चार प्रकार के ऋणों से ऋणों से मुक्त होना यह व्यवस्था उ० वैदिक आर्यों की एक अभिनव परिकल्पना थी क्योंकि इसके माध्यम से उद्यम एवं सामाजिक नियन्त्रण के बीच सामंजस्य लाने की कोशिश की गयी थी इस प्रकार उ० वैदिक कालीन समाज में कुछ ऐसी परम्परायें स्थापित हुयी जिन्होंने परवर्ती काल के समाज को गहराई से प्रभावित किया।